# मनमानी के मजे

सर्जेई मिख़ालोव

# मनमानी के मजे

(एक अद्‌भुत किस्सा बच्चों और उनके अभिभावकों के लिए)

इसे गढ़ा और रूसी भाषा में लिखा **सर्जेई मिखालोव** ने
और अंग्रेजी में पढ़कर इसे हिन्दी भाषा दी
**सोमदत्त** ने।

संभावना प्रकाशन, हापुड़—245101

ISBN-81-86209 -61-1

| | | |
|---|---|---|
| **नवीन संस्करण** | : | 2007 |
| **मूल्य** | : | 30.00 |
| **प्रकाशक** | | संभावना प्रकाशन<br>रेवती कुंज, हापुड़ 245101 |
| **मुद्रक** | : | आर. के. ऑफसेट<br>दिल्ली – 32 |

ऐसा कभी नहीं हुआ। लेकिन हो सकता था। और ऐसा कहीं सचमुच हुआ तो...

एक नन्हा लड़का एक बड़े शहर की मुख्य सड़क से जा रहा था, ठीक-ठीक कहा जाय तो सही मानों मे वह चल नहीं रहा था, हाथ पकड़कर घसीटा जा रहा था और वह खींचने वालों को अपनी ओर खींचता, पाँव पटकता, घुटनों पर बैठता, सुबकता चीख रहा था।

"मुझे आइसक्रीम चाहिए, आइसक्रीम!"

"तुम्हें अब और नहीं ले दी जाएगी।" मजबूती से उसका हाथ पकड़े हुए माँ ने शान्ति से कहा, "तुम काफी खा चुके हो।" लेकिन वह नन्हा लड़का अपनी पूरी आवाज से चीखे जा रहा था 'हम और लेंगे। थोड़ी-सी और लेंगे।'

इसी तरह करते वे आखिरकार घर पहुँचे और सीढ़ियाँ चढ़कर अपने कमरे में दाखिल हुए। वहाँ पहुँच माँ ने, नन्हें लड़के को दूसरे छोटे कमरे के एक कोने में खड़ा कर दिया और सख्ती से कहा, "तुम यहाँ तब तक खड़े रहोगे जब तक मैं तुम्हें माफ नहीं करती!"

"लेकिन मैं यहाँ करूँगा क्या?" लड़के ने अपनी सिसकियाँ रोकते हुए पूछा।

"सोचो!"

"क्या सोचूँ?"

"सोचो कि तुम कितने भयंकर बच्चे हो!" माँ ने जवाब दिया और दरवाजे को बाहर से बंद करती हुई चली गई।

भयंकर बच्चे ने सोचना शुरू किया। पहले उसने सोचा कि चाकलेट वाली आइसक्रीम फल वाली आइसक्रीम से कितनी अच्छी थी। फिर उसे लगा कि अगर वह पहले वाली आइसक्रीम खाए और उसके तुरन्त बाद चाकलेट आइसक्रीम तो चाकलेट आइसक्रीम का स्वाद मुँह में रहा आएगा और ऐसा लगेगा जैसे दो तरह की आइसक्रीमें

एक साथ मुँह में हों और सच पूछा जाय तो इसी वजह से सड़क पर इतनी खराब बात हुई। उसे याद आया और महसूस हुआ कि अपनी हरकतों से वह आने-जाने वालों का ध्यान अपनी ओर खींच रहा था। लोग उसकी ओर मुड़-मुड़कर देख रहे थे और कह रहे थे–"कितना भयंकर लड़का है।" कितनी बुरी बात थी, उसने सोचा।

फिर नन्हे लड़के ने सोचा छोटा होना कितना बुरा है और उसे कोशिश करके जल्द से जल्द बड़ा हो जाना चाहिए क्योंकि बड़े लोग जो चाहते हैं सो करते हैं और बच्चों को कुछ भी नहीं करने दिया जाता। इस विषय पर वह आगे सोच पाता कि इसी बीच उसे पीछे खिड़की थपथपाने की आवाज सुनाई दी। उसने तुरंत नहीं बल्कि पीछे तभी देखा जब थपथपाहट की आवाज उसे दुबारा सुनाई पड़ी। तब सावधानी से उसने अपना सिर घुमाया। सही माने में तो उसने ये सोचा कि वह उसके कबूतर दोस्त की आवाज होगी जिसे वह हमेशा रोटी का चूरमा खिलाता है। लेकिन वह अचम्भे में पड़ गया जब उसने देखा कि वह कबूतर नहीं बल्कि सचमुच के कागज की एक पतंग थी। पतंग वहाँ किसी चीज में अटक गई थी और हवा के झोंकों से हिलकर काँच से टकरा रही थी।

लड़के ने जाकर खिड़की खोली और पतंग को छुट्टा कर दिया। वह खास तौर से सुन्दर एक बड़ी पतंग थी। उसका चौखटा हल्की लकड़ी का बना था और उसमें चारों ओर से गटापारचा चिपका था। एक तरफ बादामी बरुनियाँ, नीली गोल आँखें बैंगनी नाक और सन्तरे के रंग का मुँह पेन्ट किया हुआ था। लेकिन सबसे बढ़िया तो थी उसकी लम्बी, खूब लम्बी पूँछ।

वह लड़का अचरज में पड़ गया जब छूटते ही पतंग ने धन्यवाद देते हुए उससे पूछा, "गुड्डे, तुम्हारा नाम क्या है?"

"लोग मुझे भयंकर लड़का कहते हैं।"

"और तुम यहाँ घर में क्यों बन्द हो?"

"मुझे सजा मिली है।"

"क्या किया था तुमने?"

"पूरी बात बताने में बहुत देर लगेगी। मुझे माँ ने सजा दी है।"

"हमेशा यही होता है," पतंग ने उसे पुचकारते हुए कहा, "मैंने अभी तक एक भी ऐसा बच्चा नहीं देखा जिसे किसी न किसी ने सजा न दी हो। लेकिन सुनो, मैं एक ऐसी जगह जानती हूँ जहाँ यह सब बन्द हो चुका है। तुम्हारे घर के बाँस में अटकने से पहले मैं वहीं जा रही थी।"

"मुझे भी ले चलो।" लड़का गिड़गिड़ाया।

"क्यों नहीं, दो जन साथ रहेंगे तो यात्रा में भी बड़ा मजा आएगा।" लो मेरी पूँछ पकड़ लो। जोर से पकड़ना और कोशिश करना कि नीचे न देखो, नहीं तो चक्कर आ जाएगा।"

बिना कुछ और सोचे लड़के ने अपने दोनों हाथों से पतंग की पूँछ पकड़ी, खिड़की के पटिये पर खड़े हो ताकत लगाकर एक साथ दोनों पाँवों से ऊपर उछला और अगले छिन वह अपने घर की छत के ऊपर से उड़ रहा था, फिर पूरे शहर के, जंगलों के, नदियों के और झीलों के और तब उसने नीचे की ओर देखा, नीचे, दूर खूब दूर जमीन, लेकिन उसे रत्ती भर घबराहट नहीं हुई और न चक्कर आया।

घंटाघर की घड़ी ने आधी रात के बारह बजाये।

पिता, माँ, बाबा और दादी, सब लोग चुपचाप खड़े जुड़वाँ बच्चों गोलू और नीलू को देख रहे थे। उनकी हल्की घुर्रक बज रही थी और वे अपने छोटे-छोटे बिस्तरों में, बच्चों की गहरी नींद में डूबे धीरे-धीरे मुस्करा रहे थे।

"जरा देखो इन्हें", पिता ने कुछ चिढ़ से कहा, "ये मुस्करा भी रहे हैं। लगता है जैसे ये मुरब्बे के उस जार का सपना देख रहे हैं जो पिछले हफ्ते इनके हाथ लग गया था और जिसे वे चट कर गए थे..."

"या हो सकता है कि नीले रंग की मेरी उस कलर-ट्यूब का सपना देख रहे हों जिससे मैंने बिल्ली बनाई थी" बाबा ने कहा। वे चित्रकार थे। उफ! लड़कों का पेन्ट-वेन्ट से खेलना उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं था।

"चलने का समय हो गया।" पिता ने जोर देकर कहा, "वे हमारे लिए रुके नहीं

रहेंगे।''

माँ एक बिस्तरे के करीब गई और गोलू का माथा चूमने के लिए झुकी।

''ऐसा मत करो, चूमो नहीं।'' पिता बोले, ''वह जाग जाएगा और फिर हम जा नहीं पाएँगे।''

दादी ने एक बिस्तरे के पास जाकर कम्बल सीधा किया। सबसे छिपाकर उनने अपनी आँखों से बहता आँसू पोंछ लिया।

''इस बार उन्हें अच्छा पाठ पढ़ाना होगा'', बाबा फुसफुसाये, एक हाथ से उनने अपना बड़ा थैला संभाला, दूसरे में रंगों का डिब्बा और कूँचियाँ।

''चलो, चलो,'' पिता ने जल्दबाजी में कहा और अपने कंधों पर भारी दुशाला डाल लिया। माँ ने दो थैले अपनी बाँहों में लटकाए, दादी ने एक डलिया उठाई और बुनाई की सलाइयाँ जिन्हें वह हमेशा साथ रखती थीं और चारों बिल्ली जैसी खामोशी से चलते सावधानी से किवाड़ उढ़काते हुए, कमरे से बाहर निकल गए।

शहर नींद में डूबा था। बल्कि सही-सही कहें तो ये कि बच्चे सो रहे थे। गेंद की तहर गोल-मोल या दोनों बाँह फैलाए वे उन बच्चों की गहरी नींद सो रहे थे जो दिन भर यहाँ वहाँ भागे हैं, बचपने की तकलीफों पर रोये हैं और जिनने अपने उत्पातों या कहना न मानने या स्कूल में कम नम्बर मिलने, फूल की क्यारियों को रौंदने और अपनी गेंदों से खिड़कियों के काँच तोड़ने, चीजें बिगाड़ने या किन्हीं दूसरी शरारतों की सजा भुगती है। वे सो रहे थे गुड़ी-मुड़ी, तोतों की तरह या नन्हीं हिम बूँदों जैसे बालों वाले देवदूतों से। नर्म घुटनों में खरोंचे और घाव लिए कोई किसी झाड़ में दूध का अपना आखिरी दाँत तुड़वाये, कोई खिलौना या पिस्तौल या गुड़िया लिपटाए साधारण बच्चे। और अपनी नींद में वे हँस या रो रहे थे क्योंकि बिताये गए अच्छे या बुरे दिन के अनुसार वे हँसते-खुशमिजाज या बुरे-बुरे सपने देख रहे थे। लेकिन कोई भी बच्चा, अजूबा से अजूबा सपने में, देर रात, शहर के सभी हिस्सों से, शहर के बड़े चौक की तरफ जाती चौड़ी सड़कों से सँकरी अँधेरी गलियों से गुजरते अपने पिताओं, माताओं, बाबा-दादियों को नहीं देख पा रहा था।

चौक का नाम बहादुर खोजी के नाम पर रखा गया था और शहर की पूरी जनता आधी रात के गजर पर वहाँ इकट्ठा होनी थी। उस चौक पर वे थे जो कल नानबाई की भट्ठी में डबल रोटियाँ और दूसरी चीजें सेक रहे थे, जो गलियों में या दूकानों में रंगारंग आइसक्रीमें बेच चुके थे, वे जिनने बच्चों को इंजेक्शन दिए थे, ज्यादा मिठाई खाने से खराब हुए दाँत सुधारे थे और इन्हें लगातार रहने वाले जुकाम की दवा दी थी। घंटे की आवाज के साथ ठीक समय पर वे मास्टर आए जिनकी लाल पेन्सिलों ने नकल मारने के लिए छात्रों की कॉपियों पर बुरे नम्बर देते हुए निशान लगाए, इत्रों से गमकते, बाल काटने वाले वे नाई आए जिन्होंने माताओं की मरजी से बच्चों के बाल काटे।

वहाँ दर्जी थे और मोची, पोस्टमेन और बढ़ई, सभी तरह की गाड़ियों के ड्राइवर, दूकानों में काम करने वाली लड़कियाँ, सारे घड़ीसाज और पहरेदार। वे सब आए, अपने सोते हुए बच्चों को घर छोड़कर।

गोलू और नीलू के पिता, माता, बाबा और दादी ठीक उसी घड़ी आए जबकि शहर के सबसे बड़े परिवार वाले डा. नाककानगला उस ऐतिहासिक स्मारक की चौकी के ऊपर चढ़कर अपनी एक बाँह बहादुर खोजी के एक पाँव के चौगिर्द लपेटकर भाषण देना शुरू कर रहे थे। उनकी आवाज भावातिरेक से डूब रही थी और वे रह-रह कर अपना रूमाल आँखों तक ले जा रहे थे।

''यह हम सबके लिए मुश्किल है लेकिन हमें अपने निर्णय पर अमल की ताकत जुटानी चाहिए, क्योंकि निर्णय हमने ले लिया है।'' डाक्टर ने कहा, ''अपने प्यारे लेकिन उजड्ड, आलसी, हठी, शरारती बच्चों को सुबह हमारी अनुपस्थिति में जागने दो। मेरे तेरह बच्चे हैं,'' उनने कहना जारी रखा, ''मैं उनमें कृतज्ञता का रत्ती भर अहसास नहीं पाता, मैं तो हमेशा यही सुनता हूँ—'मुझे दो' 'मुझे करने दो,' 'मैं नहीं', 'मैं बिल्कुल नहीं।' मैं उनसे निबटते-निबटते थक गया हूँ। और हम सभी एक सी स्थिति में हैं—हमारा धीरज खत्म हो गया है। अब एक ही तरीका है—ये शहर बच्चों के हवाले कर दें। हम उनके काम में अड़ंगा नहीं डालेंगे। वे जैसा चाहें रहें, जो चाहे करें। और, तब हम देखेंगे. ..धन्यवाद।''

अपने आँसू पीते और पुरुष की तरह अपनी सिसकी को रोकते हुए डाक्टर साहब चौकी से उतरे और भीड़ में खो गए। स्त्रियाँ रोईं और बहुत सारे आदमियों के चेहरों से भी यही प्रकट हो रहा था कि वे भी कोई खुश नहीं हैं। घड़ी ने जब दो का गजर बजाया तब शहर में एक भी वयस्क व्यक्ति नहीं रह गया था।

पहले गोलू जागा। उसने अपनी आँखें मलीं और देखा कि नीलू अभी भी सो रही है। फिर एक सपाटे से उसने नीलू के ऊपर पड़ा कम्बल हटाया, उसके पाँव खींचे, तलुवों में चिकोटी काटी और जीभ निकालकर उसको बिरायाँ।

"कोई हमें जगाने नहीं आया, मैं खुद उठा", गोलू बोला, "उठो, वरना हमें स्कूल में देर हो जाएगी।"

"आज इतवार है न?" आराम से जम्हाई लेते हुए नीलू ने पूछा।

"इतवार कल था। आज सीधा सट्ट सोमवार है।"

"काश! इतवार के बाद भी कहीं इतवार हो पाता...लेकिन नहीं, ऐसा कहाँ, इसके बीच तो सोमवार और मंगलवार और बुधवार और तमाम वार हैं", नीलू ने गहरी साँस लेते हुए कहा।

उसने इतमीनान से अँगड़ाई ली और उठने की तैयारी करने लगी।

पिता घर में नहीं थे, न माँ, न दादी और न बाबा। पहले तो बच्चों ने सोचा कि पापा काम पर चले गए हैं और ममी ब्रेड लेने। लेकिन दादी और बाबा कहाँ हो सकते हैं। वे तो इतनी जल्दी कभी नहीं उठते।

"लेकिन कोई हमें जगाने क्यों नहीं आया!" गोलू ने अचम्भे के साथ आशंका जाहिर की– "और उन्होंने हमारा नाश्ता क्यों तैयार नहीं किया," नीलू ने सोचा।

अचानक बच्चों ने एक बड़ा कागज खाने की मेज पर पड़ा देखा। वह पिता के हाथों का लिखा हुआ था–'बच्चो, जब तुम इसे पढ़ोगे, तब हम दूर होंगे। हमें खोजना मत। हमने तुम्हें अकेला छोड़ देना तय किया है। अब तुम्हारे कामों में कोई अड़ंगे नहीं डालेगा। हम तुम्हारी शरारतों से थक गए हैं।' - पिता

उसके नीचे माँ के नाजुक हरुफों में लिखा उनने पढ़ा—

"गैस और पानी से सावधानी बरतना, उन्हें बन्द करना न भूलना। ऊपर खिड़कियों के मेहराबों पर मत चढ़ना। रेफ्रीजरेटर में खाना रखा है।

तुम्हारी माँ

उसके नीचे छपे हुए से अक्षरों में बाबा और दादी की चिट्ठी थी—

"लेकिन फिर भी हमारे कमरों में लगे पौधों को पानी देने की याद रखना..."

गोलू ने यह सब जोर-जोर से पढ़ा, अपना सिर खुजाया और नीलू को देखा। नीलू कुर्सी के हत्थे पर बैठे गोलू को देख रही थी।

"तुम्हें याद है माँ ने क्या कहा था?"

"क्या कहा था?"

उसने कहा था कि, "अगर तुम अपनी हरकतें बन्द नहीं करोगे तो हम चले जायेंगे और कभी वापस नहीं आएँगे"...तो वे चले गए हैं।

नीलू की ठुड्डी थरथराई, लेकिन वह रोई नहीं।

"वे हमें, बस डराना चाहते हैं। अपने स्कूल से वापस लौटते तक वे आ जाएँगे, तुम देखना अगर न आ जाएँ।" गोलू ने विश्वास के साथ कहा और फ्रिज खोला। उमसें खाने की, सभी तरह की चीजें रखी हुई थीं। गोलू ने सेलोफेन का पैकेट खोलकर उबली सॉसेज की एक गड्डी खींची, उसके दो हिस्से किए और एक अपनी बहन को थमा दिया।

"लेकिन हमने मुँह-हाथ नहीं धोया और दाँत साफ नहीं किए," नीलू ने कुछ हिचकिचाते हुए कहा।

"हम जैसे भी हैं खासे साफ हैं", भरे मुँह में सॉसेज चबाते हुए गोलू बोला।

"लेकिन अगर वह नहीं लौटे तो क्या होगा!" नीलू ने हल्की काँपती आवाज में कहा, "उनके बिना हम अपना काम कैसे चलाएँगे।"

"वे खो नहीं जायेंगे," बात को उड़ाते हुए गोलू ने कहा, "चलो-चलो, जल्दी स्कूल चलो, मेरा पहला पीरियड ड्राइंग का है और मैं अपनी नीली बिल्ली बनाना चाहता

हूँ।'' गोलू ने हँसी के मारे दुहरे होते हुए कहा। नीलू भी उसके साथ हँसी। उन्हें वह नीली बिल्ली याद आ गई जिसका नीला रंग छुड़ाने के लिए, उसे सफाई करने वाले के यहाँ ले जाना पड़ा था।

''तुम्हें याद है, बाबा उस रंग को क्या कहते थे?''

''हाँ, याद है।'' गोलू ने कहा, ''अल्ट्रामेरीन।''

वह सामान्य सोमवारों से बिल्कुल अलग सोमवार था। चौराहों और सड़कों के आसपास खिलौने वाली दूकानों के बाजू से, हलवाई की और दूसरी दूकानों, सँकरी गलियों, अँधेरी खोरों से बच्चे अपने हाथों या कन्धों पर बस्ते लटकाए हुए, मनमर्जी सड़क पार कर रहे थे। जब वे सड़कों पर चलने के नियम तोड़ रहे थे तब उन्हें किसी ने न रोका न टोका और न ही किसी ने सीटी बजाई क्योंकि पूरे शहर में तमाम घरों में और सड़कों पर उनके अलावा कोई और नहीं था। भागते हुए उनने एक दूसरे को वह अचम्भे भरा समाचार सुनाया, लेकिन वह तो समाचार था ही नहीं क्योंकि जैसा हमें मालूम है कि उस शहर के तमाम बच्चों को, उस सुबह, यह पता चल गया था कि उनके अभिभावक उन्हें छोड़कर गायब हो गए हैं।

गोलू और नीलू हाँफते हुए, दूसरों को पूरी आवाज से अद्भुत घटना सुनाते हुए, बच्चों की भीड़ में से खुद को मुश्किल से ठेलते, स्कूल के मैदान से अपनी कक्षा में पहुँचे।

वहाँ जो शोर था उसका वर्णन करना असम्भव है। वैसा शोर, उस जगह, इससे पहले कभी भी नहीं सुना गया था। बच्चे एक डेस्क से दूसरी पर उछल रहे थे, एक दूसरे का पीछा करते वे किताबों से एक-दूसरे की पीठों पर धौल-धप्पा जमाने की कोशिश कर रहे थे। लड़कियाँ असाधारण प्रसन्नता से कीक रही थीं। किसी ने ब्लैक-बोर्ड पर लिख रखा था–

**'सारी पढ़ाई बन्द' 'पढ़ाई से छुट्टी'**

सभी कक्षाओं में यही चल रहा था और सारे ब्लैक-बोर्डों पर यही लिखा हुआ था। ''पढ़ाई से छुट्टी।'' शिक्षकों का कमरा खाली था। बड़ी मास्टरनी के कमरे के दरवाजे पर ताला लटक रहा था। सामान रखने के कमरे भंडार में कोई ड्यूटी पर नहीं था।

''ये हुई कुछ बात।'' गोलू ने कहा, ''अब हम सचमुच मजे कर सकते हैं।''

''तो इन सबने हमारे खिलाफ षड्यन्त्र रचा है। यहाँ तक कि टीचरों ने भी...'' नीलू कुहकी।

''वे हमें पाठ पढ़ाना चाहते हैं।'' उसके भाई ने विश्वास के साथ कहा। ''हम देखते हैं।''

गोलू और नीलू उस चबूतरे के पास पहुँचे जो पानी भरने का टब उलटकर बनाया गया था और जिस पर खड़े होकर 'गुबरेला' नाम से पुकारा जाने वाला लड़का भाषण दे रहा था–

''आखिरकार अब हम पर हुक्म चलाने वाला कोई नहीं है।''

उछाह से सुर्ख होते हुए गुबरेला चिल्लाया, ''कोई हमसे वह काम नहीं कराएगा जो हम नहीं करना चाहते। मनमानी के मजे, जिन्दाबाद। हम अपने सिर के बल खड़े हों चाहे चारों हाथों-पैरों से चलें, चौपायों की तरह, कोई कुछ नहीं कहेगा।''

''न हमें सजा देगा।'' भीड़ में से किसी ने चिल्लाकर कहा।

''न हमें सजा देगा।'' गुबरेले ने हाँ में हाँ मिलाई और मानो बात को और साफ करने के इरादे से, थोड़ी देर के लिए वह सिर के बल खड़ा हुआ फिर टब से कूद कर चौपाये की तरह चलता बाहर हो गया। उसकी कक्षा के दूसरे बच्चे भी जो सब गुबरेलों के नाम से पुकारे जाते थे पहले सिर के बल खड़े हुए फिर चौपायों की तरह चलते बाहर सरक गए। वे हमेशा बन्दरों की तरह गुबरेले की नकल करते थे।

बिखरे बालों और पकौड़ी नाक वाला एक लड़का टब पर चढ़ा। वह डाक्टर नाक-कान गला के बच्चों में से एक था। स्कूल में उसका नाम तमंचा था। उसका यह नाम इसलिए पड़ा कि उसने एक बार तमंचा बनाकर उसमें सचमुच की बारूद भर ली, फिर अपनी दाहिनी आँख दबाई, निशाना साधा और लिबलिबी दबा दी। उस बार वह अपनी

दाईं आँख लगभग खो ही बैठा था।

"मेरी बात सुनो।" वह अपने चारों ओर जमे बच्चों से बोला—"मेरे छह भाई और छह बहनें हैं, और अब हम भी अकेले हैं। वे हमेशा छोड़ जाने की धमकी देते रहते थे और अब तो उनने यह करके भी दिखा दिया। वे यह लिखकर गये हैं"...उसने अपने पेंट की जेब में हाथ डाला, एक मुड़ा-तुड़ा कागज निकाला, घुटने पर रखके उसे सीधा किया और जोर-जोर से पढ़कर सुनाने लगा...

"ऐ खतरनाक बच्चो..."

लेकिन किसी ने नहीं सुना, वे सब कहीं और जाने की जल्दी में थे।

"आओ, इधर आओ," गोलू ने नीलू से कहा, "वरना हमारे लिए कुछ भी नहीं बचेगा।"

"क्या नहीं बचेगा?"

"दिखाता हूँ।"

गोलू ने अपनी बहन का हाथ् पकड़ा और उसे घसीट ले गया।

स्कूल के मैदान में लगे आम के पेड़ के तले किसिम-किसिम के रंग रूप के बस्ते एक पर एक लापरवाही से ढेर हो रहे थे। गोलू और नीलू जब वहाँ से गुजरे तो उनने भी वैसा ही किया और वहाँ बस्तों का बेकार बोझ हल्का करते हुए वे भी सूने स्कूल के बाहर निकल पड़े।

'दूध के दाँत' नामक दूकान पर आइसक्रीम साफ करते बच्चों का मेला लगा हुआ था। 'दूध-दाँतों' ने मिनटों में ही तमाम टेबिल-कुर्सियाँ हथिया ली थीं और कई तो खिड़कियों पर और फर्श तक में जमे हुए थे।

अंदाज लगाना मुश्किल है कि एक 'दूध-दाँत' अगर उसे रोका न जाए तो एक बार में, रस भरी, आम, अन्ननास, सन्तरे या मीठे नीबू की कितनी आइसक्रीम खा सकता है। वे छोटी प्लेटों में रखकर या स्टील के छोटे चम्मचों से नहीं खा रहे थे, न बाँस या गत्ते के चम्मचों से। वे आइसक्रीम, सूप वाली बड़ी-बड़ी प्लेटों में उँड़ेलकर बड़ी-बड़ी करछुलों से सूँत रहे थे। मुँह में रखकर वे उसके घुलने का इन्तजार नहीं करते थे बल्कि

उसे गुटक रहे थे। हालत यह हुई कि उनके गले बैठने लगे। गुबरैले की तो आवाज ही निकलना बन्द हो गई। अपनी प्लेट निबटाकर वे फिर कतार में लग जाते। आइसक्रीम के टूटे कतरे पैरों तले कुचले जा रहे थे, किसी को उनकी परवाह नहीं थी।

"मैं अब और नहीं खा सकती, मुझे लगता है जैसे बर्फ हो गई हूँ।" नीलू ने भर्राए गले से कहा। उसकी नाक नीली हो रही थी और आँखों की तरैयाँ भर आई थीं।

"बचा-खुचा हम अपने साथ ले जाएँ तो कैसा रहेगा?" गोलू ने सुझाव दिया। वह भी चाकलेट आइसक्रीम की दसवीं प्लेट खाने के बाद थरथरा रहा था। लेकिन उसकी बात पूरी हो कि कहीं से फलवाली गुलाबी आइसक्रीम का एक लोंदा उसकी नाक में आकर लगा और सामने टेबल पर फैल गया। दूसरा लोंदा नीलू की नाक पर लगा।

जुड़वाँ घूमे और उनने देखा कि 'नाककानगला' लोगों ने आइसक्रीम गेंदों का खेल शुरू कर दिया था। गुबरेलों ने दूसरे कोनों से जवाब देना शुरू किया। गोलू और नीलू अगर तेजी से सरक न लेते तो चाहे-अनचाहे उन्हें भी इस लड़ाई में शामिल होना पड़ता।

जब वे सड़क पर पहुँचे तो घंटाघर की घड़ी मनमानी के मज़े के पहले दिन की दोपहर के बारह बजा रही थी।

बौने को लोग, फन्तिक कहते थे। असल में फन्तिक उन चमकदार पन्नियों को कहते हैं जिनमें टाफियाँ लिपटी रहती हैं। लेकिन फन्तिक उसका नाम भी था—उपनाम या बच्चों द्वारा दिया गया नाम नहीं।

फन्तिक शहर के बाहर लाल खपरैल और सरकाऊ खिड़कियों वाले एक छोटे मकान में रहता था। वह लोहे के एक बचकाने खटोले पर सोता और बच्चों की दूकान से अपने कपड़े खरीदता। उसकी सही उम्र किसी को नहीं मालूम थी। लेकिन यह तय था कि बचपना गुजारे उसे बरसों हो चुके हैं।

फन्तिक अकेला रहता था। बच्चों को सजा देना तो दूर, उसने कभी बच्चे पोसे भी नहीं थे। वह हमेशा सोचता कि बच्चे खुशमिजाज और दयालु दोस्त होते हैं, दूसरों के लिए हमेशा खुशियाँ लाते हैं, क्योंकि उनसे वह केवल इतवार के रोज सर्कस में मिला

करता था। करतबों के समय वे जोर-जोर से हँसते, उत्सुकता या प्रसन्नता से अधीर होते और बौनों का काम, जिनमें फन्तिक सबसे ऊँचा था, खत्म होते ही जोरदार तालियाँ पीटते।

जिस घटना की हम बात कर रहे हैं, उसके कुछ दिन पहले सर्कस बाहर गाँव गया था क्योंकि जिन दिनों की घटना हम बयान कर रहे हैं उसके कुछ पहले सर्कस बाहर गाँव जा चुका था। फन्तिक रिहर्सल करते समय लगी चोट के कारण नहीं जा पाया। उस रात शहर के लोग फन्तिक को भूल गए क्योंकि सभी ने समझा कि वह अन्य बौनों के साथ पहले ही शहर छोड़कर जा चुका है।

उस सुबह फन्तिक जब जागा तो खुश था। उसके पाँव का दर्द लगभग खत्म हो चुका था और उसने तय किया था कि नाश्ते के तुरंत बाद बाजार जाकर वह अपने लिए एक छड़ी खरीदेगा।

उसने अपना बिस्तर सफाई से सहेजा और संगीत के साथ रोज की कवायद करने के लिए उसने रेडियो चालू किया। लेकिन जाने क्यों रेडियो खामोश था। बात कुछ अजीब थी तो भी फन्तिक ने अपनी प्रिय धुन गुनगुनाते हुए कवायद की। फिर दाँत साफ किए, पानी गर्म करके स्नान किया, कंघी की, उबालकर अंडा खाया, गिलास भर दूध पिया और ख्याल से अपनी क्यारियों में लगे पौधों को पानी देने के बाद अपनी छुटकी साइकिल पर सवार हो, गेट पार करके वह सड़क पर आ गया।

सबसे पहले अचरज तो उसे यही हुआ कि आज किसी ने उससे आगे निकलने की कोशिश नहीं की। चौराहों पर लगी यातायात बत्तियाँ जल नहीं रही थीं। बच्चों के अलावा सड़क पर चलने वाले राहगीर भी नहीं थे। हाँ, बच्चे बहुतायत में थे। यहाँ भी, वहाँ भी, अकेले या झुंडों में, खड़े हुए या चलते, भागते।

चौराहे पर पहुँचते ही फन्तिक को और बच्चे नजर आए। उनमें से कई उसके आजू-बाजू साइकिल या स्कूटर चला रहे थे, लेकिन किसी का रत्ती भर ध्यान उस पर नहीं था।

'बहादुर खोजी चौक' के द्वारा पर ही उसे अचानक इतनी तेजी से साइकिल का ब्रेक

लगाना पड़ा कि वह गिरते-गिरते बचा क्योंकि दौड़कर सड़क पार करते दो लड़के अचानक पहिए के सामने आ गए थे। वे पेन्ट भरी बाल्टियाँ लिए थे।

"इरादा क्या है तुम लोगों का?"

फन्तिक गुस्से में बोला "मैं तुमसे टकरा गया होता। तुम सड़क पर चलने के नियमों का पालन क्यों नहीं करते? अपने घरवालों को सजा दिलाना चाहते हो?"

"हमारे कोई घरवाले नहीं हैं।" बड़े नाककानगले ने सूचना दी। और छींक पड़ा।

"वे हमें छोड़ गए हैं।" मँझले नाककानगले ने ताईद की और वह भी छींका।

"लेकिन तुम लोग स्कूल क्यों नहीं गये?"

"वे सब रफूचक्कर हो गए हैं।"

"रफूचक्कर? क्या मतलब है तुम्हारा?"

फन्तिक को कुछ भी पल्ले नहीं पड़ रहा था।

"तुम धौंस क्यों दे रहे हो, आसमान से नीचे उतरो, जैसे तुम्हें कुछ मालूम ही नहीं," सारे नाककानगले गुस्से में चीखे। "अपनी साइकिल बढ़ाओ और यहाँ से दफा हो जाओ।"

आज तक फन्तिक से कोई ऐसा नहीं बोला था। उसकी साँस घुटने लगी और आँखें भर आईं। बच्चों से वह कुछ कहना चाहता था, उन्हें कुछ समझाना चाहता था लेकिन वे गायब हो चुके थे।

कक्षा में अक्सर बच्चों को अपने मन की चित्रकारी करने को नहीं मिलती थी बल्कि दी गई चीजें जैसे गुलदस्ता या मिट्टी के बर्तन, बहुत हुआ तो सेब (जिसे पीरियड खत्म होते ही धीरे से आँख बचाकर जेब में सरकाने के बाद पेशाबघर में जाके हड़प किया जा सकता था) बनाना होता था।

अपना कोयला और छुई मिट्टी और ज़लरंग लेकर सड़क पर आना और चाहे जहाँ जो जो मन में आए रँगना-पोतना और ही बात थी।

नाककानगला लोगों ने तिलंगों की गली का दायाँ और गुबरेलों ने बायाँ हिस्सा

हथिया रखा था। तमाम गुबरेले पूरे जोर-शोर और ताकत से तमंचा परिवार की टीम से अच्छी ड्राइँग बनाने में जुटे थे।

नाककानगले वालों की पट्टी में सीमेंट की दीवार थी और उस पर चित्र बनाना, खिड़की, दरवाजों से पटी दीवार पर चित्र बनाने से ज्यादा आसान था। लेकिन इस कमी को पूरा करने के लिए गुबरेलों के हिस्से में, दूकानों की काँच की ढेरों खिड़कियाँ थीं जिन पर वे तरह-तरह के, जीभ निकाले हुए मजेदार चेहरे, चिमनियों से गाढ़ा काला धुआँ उड़ाते हुए पानी के जहाज और रेल के एन्जिन बना रहे थे।

तो भी तमंचा ज्यादा कल्पनाशील और बुद्धिमान था। हालाँकि उसके पिता डाक्टर नाककानगला बहुत भले डाक्टर थे और शहर भर में बच्चों और बड़ों के गलों और कानों का इलाज करते फिरते थे, तमंचा अफसर बनना चाहता था। उसने अपने सभी भाई बहनों का नेतृत्व संभाल लिया और बाड़े की पूरी दीवार युद्ध दृश्यों से भर दी। टैंक आगे बढ़ रहे थे, हवाई जहाज बमबारी कर रहे थे, तोपें आग उगल रही थीं, राकेट उड़ रहे थे, घायल सैनिक गिर रहे थे, पानी के जहाज दो टुकड़ों में टूट-फूट रहे थे। इतना सब, पहले कोयले से बनाया गया, बाद में इसे नीले और हरे पेन्ट से रंगा गया जो नाककानगला लोग कहीं से बाल्टियों, कनस्तरों में भर-भरकर लाए थे।

गोलू और नीलू जब वहाँ पहुँचे तब तमंचा अपने होंठ दबाए, दुश्मन के एक जलते टैंक को आखिरी हाथ जमा रहा था।

"हम भी कुछ बना लें।" गोलू ने नम्रता से पूछा।

"किसी दूसरी गली में।" तमंचे ने रूखा जवाब दिया और फिर अपनी कूँची लाल रंग के डिब्बे में डुबोई और टैंक के पिछले हिस्से से निकलती आग रंगने लगा।

"लालची कहीं के," नीलू बुदबुदाई और दोनों सड़क के उस पार निकल गए।

गुबरेलों ने उसका बेहतर स्वागत किया। उन्हें मालूम था कि इन जुड़वाँ भाई-बहनों के बाबा नामी कलाकार थे सो वे आपस में सिमट गए और गोलू को उनने फर्नीचर की दूकान की एक खिड़की दे दी। खिड़की लगभग भरी हुई थी, केवल जरा सी जगह नीचे दाहिने कोने में खाली थी।

गोलू ने लाल रंग की बाल्टी में कूँची डुबाई और झटपट एक नीली बिल्ली बना दी।

"उसकी आँखें हरी बना दे।" नीलू ने चिरौरी की।

गुबरेलों में से एक ने गोलू को पेन्ट की ट्यूब दे दी और नीली बिल्ली को चमकदार हरी आँखें मिल गईं।

"देख गोलू देख, टोटो।" नीलू अचानक चिल्लाई और गोलू की बाँहें खींचने लगी।

तैल रंगों की बदबू से घबराया टोटो बिल्ला सड़क पर जोरदार छलाँगें लगा रहा था। इसके पहले भी एक बार वह रंग साफ करने वाले के पास जा चुका था जहाँ बड़ी मुश्किल से उसे पुराना रंग वापिस मिला था।

फन्तिक तिलंगों की गली में घुसा और जो कुछ वहाँ उसने देखा उससे उसका दिमाग चक्कर खाने लगा। वह सड़क की गली नहीं बाल-चित्रकला की प्रदर्शनी थी, लेकिन ऐसी प्रदर्शनी नहीं कि उसे उठाकर प्रदर्शन के लिए परदेस भेजा जा सके। क्योंकि ये ऐसे चित्र थे जिन्हें खिड़कियों और दीवारों से केवल साबुन और पानी और ताड़पीन के तेल से ही अलग किया जा सकता था।

एक छोटी बच्ची उस लम्बी चारदीवारी के बाजू से गुजर रही थी जिसमें इस छोर से उस छोर तक अनजान कलाकारों द्वारा युद्ध-दृश्य बनाये गए थे। गुजरते हुए, कभी-कभी नाक-भौं सिकोड़ते वह बड़े ध्यान से चित्रों का मुआयना कर रही थी।

फन्तिक साइकिल चलाकर उसके पास चहुँचा।

"क्या तुम भी ऐसा बना सकते हो?" छोटी बच्ची ने अचानक उससे पूछा।

"नहीं।" फन्तिक ने सच्चाई कबूल की।

"मैं भी नहीं। आओ अपन देखें।"

"क्या? कहाँ?" फन्तिक कुछ भी नहीं समझा।

"अगली गली में वे अब वहाँ चित्र बना रहे हैं। मैं तुम्हारे केरियर पर बैठ जाऊँगी।

मुझे लोग आलू बुखारा कहते हैं क्योंकि एक बार आलू बुखारा मेरे गले में अटक गया था और अगर तमंचा उसे न निकालता तो पता नहीं क्या होता।'' फन्तिक कुछ बोले इसके पहले ही वह लड़की केरियर पर लद चुकी थी। वे आगे बढ़े।

न तो अगली गली में और न उसके बाद वाली गली में कोई था।

''फन्तिक ?''

फन्तिक को लगा जैसे कोई उसे बुला रहा है।

''फन्तिक ढेर सारे।'' लड़की ने पीछे बैठे-बैठे कहा और सड़क पर पड़ी उन चमकीली पन्नियों की ओर इशारा किया जो आइसक्रीम पर लपेटी जाती थीं। ''जानते हो, अच्छा रहे कि हम उनके घर चलें। बस बाएँ हाथ पर हैं पास ही, फिर जरा बाजू से, फिर वहाँ से पास ही है अगले मोड़ पर।''

फन्तिक ने फिर भी कुछ नहीं कहा बस पैडल मारता रहा। अच्छी बात यही थी कि उसके पैर दर्द नहीं कर रहे थे।

अचंभे की बात तो यह है कि—फन्तिक ने पैडल मारते हुए सोचा—किसी ने मुझे पहचाना नहीं। लेकिन सर्कस में तो मैं हमेशा जोकर की दमकती ड्रेस में रहता हूँ और मेरा चेहरा भी रंगापुता रहता है। आलू बुखारे को कहीं यह पता चल जाय कि मैं बच्चा नहीं बड़ा आदमी हूँ और वह भी सर्कस का जोकर तो वह अचरज से उछल पड़ेगी। फिलहाल तो उसने यह पता लगाने का निश्चय किया कि शहर में हो क्या रहा है।

आलू बुखारा हर चीज के बारे में फौजी बारीकी से बता रही थी।

''पर, क्या तुम्हें छोड़कर कोई नहीं गया, क्या तुम अनाथ हो या कोई और बात है? तुम मुझसे क्यों पूछ रहे हो, जैसे किसी और शहर से आये हो। रुको, रुको, हम पहुँच गए।''

आलू बुखारा केरियर से कूद पड़ी।

''यहाँ, यहीं रहते हैं वे।''

पहली मंजिल की खिड़की से धुआँ निकल रहा था।

घर में आग लग गई है। फन्तिक के दिमाग में कौंधा।

लेकिन आलू बुखारा शाँत थी।

"वो रही उनकी खिड़की। वे घर पर हैं। आओ—मैं तुम्हारा नाम नहीं जानती...।"

"जान जाओगी, बहुत जल्द", फन्तिक ने सोचा।

सीढ़ियाँ फलाँगते वे पहली मंजिल के उस कमरे के सामने पहुँचे जिसमें नामपट लगा था– "डा नाककानगला। आपरेशन का समय, बड़ों के लिए—सोमवार, दो से चार। बच्चों के लिए—दिन, रात हर समय।"

भीतर भयंकर आपाधापी मची थी।

तिलंगों की गली में चित्रकारी करने के बाद नाककानगलों और गुबरेलों ने सोचा कि किसी ने अच्छा नहीं बनाया है।

सो कोई नहीं जीता।

फिलहाल वे डाक्टर साहब के आपरेशन कक्ष में बैठे थे। चारों ओर, कहीं भी हर कहीं, सिगरेट धौंकते।

गुबरेलों को, जो ढेरों आइसक्रीम खाकर अपने गले बैठा चुके थे, सिगरेट और चुरटों के डिब्बे मिल गए थे। उनने ये सब अपने दोस्तों में बराबर-बराबर बाँट दिए। अपना गला साफ करने के लिए उनने सबसे मोटा, सबसे लम्बा चुरुट ले लिया। तमंचे ने अपने पिताजी का पुराना पाइप निकाला और उसमें तम्बाकू भर-कर फर्श पर लेटा हुआ चिमनी की तरह धुआँ उगल रहा था।

खिड़की खुली होने के बाद भी धुआँ कमरे में इस कदर भरा हुआ था कि बच्चे एक दूसरे को मुश्किल से देख पा रहे थे। लड़कियाँ तमाखू नहीं पी रहीं थीं लेकिन कमरे में भरी तीखी खुशबू के कारण खाँस रही थीं और उनके दम घुट रहे थे।

फन्तिक (जो धूम्रपान नहीं करता था) का सिर देहरी पर पहुँचते ही चकराने लगा। हालाँकि वह तम्बाखू की गंध से घृणा करता था लेकिन अब लौटकर वापिस जाना भी संभव नहीं था। मुसीबत में फँसे बच्चों को छोड़कर वह कैसे जा सकता था। अगर कुछ हो गया तो! हो गया तो क्या, हो ही चुका है...एक छोटी लड़की दरवाजे पर अचेत पड़ी थी। वह नीलू थी।

फन्तिक ने पूरी ताकत लगाई और नीलू को छज्जे पर घसीट लाया। ताजी हवा में वह जल्द ही चेतन्न हो आई।

"तो मैं मरी नहीं!" उसने बहुत धीमी आवाज में कहा और फन्तिक के अपने ऊपर झुके हुए झुर्रीदार चेहरे को ताका, "फन्तिक?" फुसफुसाते हुए वह मुस्काई, "फन्तिक तुम हो। मैंने तुम्हें सर्कस में देखा था, तुम कबूतर के पिंजरे से बाहर कूदे थे...और तुम्हीं ने मुझे बचाया। तुम कितने दयालु हो।"

फन्तिक ने उसे सहारा देकर बैठाया।

"गोलू, तू कहाँ है?" उसने कमजोर आवाज में पुकारा।

"यहाँ हूँ।" आवाज नीलू से भी ज्यादा कमजोर थी।

"क्या तू जिन्दा है?"

"पता नहीं!"

"यहाँ...फन्तिक है।"

यह जाना पहचाना नाम सुनतें ही धूम्रपान करते तमाम बच्चे उठ खड़े हुए। बौनों के समूह में से एक, बस बौने का नाम कौन नहीं जानता? वे सब उसे जानते थे। यह वही है जो एक नन्हें घोड़े पर सवार होकर आता, छूमंतर हो जाता और कुछ देर बाद सफेद कबूतरों से भरे एक ऊँचे गोल गुम्बद में प्रकट होता था। वही फन्तिक। तो वह नहीं गया। बड़ों में एक वही है जो रह गया है। वही एक इन 'भयंकर बच्चों' के बीच रह गया है।

फन्तिक की ओर देखते ही आलू बुखारे की आँखें गोल हो गईं।

गुबरेले ने 'हो हो' चिल्लाना चाहा लेकिन चुरुट पीने के बाद उसका गला ऐसा हो चुका था कि उसकी आवाज घरघराहट जैसी सुनाई दे रही थी।

"बच्चो!" फन्तिक ने कहा और खाँसने लगा, "यह मत समझना कि मैं तुम्हें यह बताने आया हूँ कि धूम्रपान बुरी बात है। मैं यहाँ अचानक ही आ पहुँचा। आलू बुखारा और मैं यहाँ से गुजर रहे थे, कि हमने खिड़की से निकलता धुआँ देखा, मैं समझा कि तुम लोग आग से घिर गए हो। मैं तुम्हारे काम में अड़ंगे नहीं डालूँगा। लेकिन अगर कोई काम हो तो मेरा पता याद रखना : 7 सर्कस गली।"

खाँसते और अपनी आँखों को रुमाल से ढाँकते फन्तिक कमरे से बाहर हो गया। नहीं, वह रो नहीं रहा था, हालाँकि आँसू बहाने के लिए ढेरों कारण थे।

गुबरेला, तमंचा, नाककानगले और कई और फन्तिक को बिदा देने छज्जे पर आ गए लेकिन जाने क्यों उन्हें अपनी तबियत गड़बड़ लग रही थी, शायद ताजी हवा की वजह से।

अनमना और परेशान फन्तिक अपनी बचकानी साइकिल पर सवार, शहर की गलियों में पहुँच चुका था।

उसने छड़ी नहीं खरीदी। तमाम दूकानें बन्द थीं।

शाम होते-होते बच्चे अपने घरों को लौटने लगे। गुबरेलों ने नाककानगलों के साथ रहना तय किया। सिरदर्द, बैठे गलों, जुकाम तथा धूम्रपान से उपजी अस्वस्थता के कारण जिसे जहाँ जगह मिली आराम कुर्सियों पर, सादी कुर्सियों पर पसर गये। गुबरेला ठीक प्यानो के नीचे, फर्श पर पसरा हुआ था।

गोलू और नीलू अपने घर चले गए। नाककानगलों ने उन्हें भी अपने घर ठहरने का सुझाव दिया था लेकिन तब पूरे घर में केवल बाथरूम ही खाली बचा था।

"मेरा गला सूजा है, मुझसे निगलते नहीं बनता।" नीलू ने बिस्तर पर लुढ़कने से पहले शिकायत की।

"और मेरा सिरदर्द कर रहा है। अगर हम बीमार पड़ गए तो क्या होगा?"

"दवा लेंगे।"

"कौन सी?"

"सभी।"

"तुम ऐसा मत करना, सभी दवाइयाँ खाने से हम ज्यादा बीमार हो सकते हैं।"

"हाँ, कैसी गड़बड़ है कि फन्तिक डाक्टर नहीं है।" नीलू ने गहरी साँस लेते हुए कहा।

"मैं बुरी तरह तप रही हूँ। फ्रिज से चूसने के लिए थोड़ा-सा बरफ दे।"

घंटाघर की घड़ी ने रात के बारह बजाए, फिर एक, फिर दो और तीन लेकिन फन्तिक अपने पलँग पर करवटें बदलता रहा। सुबह के पहर थोड़ी देर को उसकी आँखें लगीं। बेचैनी से भरी नींद सोया वह। सपने में उसने बच्चों को आग की लपटों से बचाया, पानी से बाहर निकाला, छतों से नीचे उतारा और उनके हाथों से सिगरेटें-चुरुटें और माचिसें छिनाईं। किवाड़ की तेज खड़खड़ाहट से उसकी नींद खुली।

दरवाजे पर गोलू खड़ा था।

"क्या हुआ?" फन्तिक ने आँखें मलते और सुबह की चिलचिलाती ठंड से काँपते हुए पूछा।

"नीलू मर रही है।" गोलू ने कहा और फूट-फूटकर रोने लगा।

"क्या हो गया उसे?"

"मुझे नहीं पता। वह बीमार है। रात वह माँ को पुकारती रही और सुबह से बोल नहीं रही और मैं बुलाता हूँ तो भी जवाब नहीं देती।"

"अच्छा!" फन्तिक बोला, "मैं अभी तैयार होता हूँ।"

फन्तिक ने जब नीलू के माथे पर हाथ रखा तब वह आँखें मूँदे लेटी थी, माथा जल रहा था।

नीलू ने आँखें खोलीं और पलकें झपकाईं...

"फन्तिक। क्या तुम मुझे बचाने आए हो? कुछ ऐसा करो कि मैं अच्छी हो जाऊँ, थोड़ा अच्छी जिससे मरूँ नहीं।"

फन्तिक पलँग की पाटी पर बैठ गया।

"मैं डाक्टर नहीं हूँ। कोशिश कर सकता हूँ।"

"करो, कोशिश करो न, करो..."

फन्तिक ने कुछ सोचा। उसने बीमार बच्चों का इलाज कभी नहीं किया था। शायद एक गिलास गरम दूध देना चहिए। जब भी सर्दी होती फन्तिक गर्म दूध पीता था।

"मुझे दूध नहीं चाहिए," नीलू चिल्लाई, "मैं दूध नहीं पीयूँगी।"

"जैसा मैं कहता हूँ, अगर तुम वैसा नहीं करोगी तो मैं तुम्हें अच्छा नहीं करूँगा।"

"तुम्हारी बात मानूँगी," नीलू बुदबुदाई, "नहीं तो तुम भी दूसरों की तरह चले जाओगे।"

"दूध बिल्कुल नहीं है," गोलू बोला, "पूरा दूध हमने कल ही पी लिया था।"

जो कुछ बंद करके रखा जा सकता था, बड़े जाने से पहले ताले के अन्दर कर गए थे। बस वे ही चीजें बाहर थीं जिनकी वजह से आँसुओं की धारें बह रही थीं। डेयरी में दूध नहीं था, न बेकरी में ब्रेड। सब्जी वाले की दूकान में सब्जी, गोश्त की दूकान में गोश्त, थोड़ी बहुत आइसक्रीम और मिठाइयों के अलावा, खुशबूदार तमाखू वाले की दूकान में कुछ अनछुई चीजें रह गई थीं। लेकिन तमाम केक और चाकलेट आइसक्रीम खाई जा चुकी थीं और पूरा लेमन मनमानी के मजे के पहले ही रोज डकारा जा चुका था।

फन्तिक बाहर निकला, दूध की दूकान की पिछली खिड़की उसे ढीली मालूम हुई। किसी तरह वह खिड़की खोलकर फन्तिक अन्दर घुसा। उसे मालूम था कि खिड़की पर चढ़ते हुए बच्चे की कोई परवाह नहीं करेगा, इसके बावजूद उसे बेचैनी हो रही थी। किसी और वक्त ऐसा करने की कल्पना भी वह नहीं कर सकता था। लेकिन बीमार बच्चे के लिए आप भला क्या नहीं करेंगे।

दूध की कई बोतलें खानों में भरी थीं। फन्तिक ने एक शीशी का ढक्कन खोला और उससे घूँट लिया। स्वाद खट्टा था।

बाहर निकलते ही फन्तिक को टोटो बिल्ला दिखा। वह भी शायद पेट भरने के लिए दूकान में घुसने की तरकीब सोच रहा था।

"अन्दर कुछ नहीं है।" फन्तिक ने कहा, "जा और चूहे पकड़।" बिल्ले ने जैसे बात समझकर म्याऊँ की और चल दिया।

बेशक सबसे अच्छी बात तो यही है की नीलू को एक चम्मच दवा दे दी जाय लेकिन दवा लिखने के लिए न तो कोई डाक्टर था न दवा बनाने के लिए कोई कम्पाउंडर।

बिना दूध लिए लौटकर फन्तिक ने बाल्टी भर पानी उबाला, एक मोटा तौलिया नीलू के सिर पर लपेटा और उसे गर्म भाप का भफारा दिया। नीलू की तबियत तुरंत बेहतर

हो गई और वह खुश नजर आने लगी।

"फन्तिक तुम यहीं रुक जाओ, और हमारे साथ रहो।" उसने कहा, "गोलू और मैं एक पलँग पर लेट जाएँगे, दूसरे पे तुम। वह बिल्कुल तुम्हारे नाप का है।"

"मैं तुम्हारे पास आता रहूँगा, यही ठीक रहेगा। अब मैं चलूँ और देखूँ कि किसी और को तो कहीं मेरी मदद की जरूरत नहीं।" दरवाजा पार करते हुए फन्तिक ने जवाब दिया और वहीं से हाथ हिलाया।

बाहरी आँगन से आवाज आई—

"गोलू! नीलू! फन्तिक है क्या तुम्हारे यहाँ?"

इस तरह 'मनमानी के मजे' का दूसरा दिन शुरू हुआ लेकिन शहर के वातावरण में मेले की छटा नहीं थी।

बच्चे, गलियों में पियराए, बिना नहाए, बिना कंघी किए उनींदे से भटक रहे थे। कुछ के पेट में दर्द था, कुछ खाँस-छींक रहे थे। चौराहों पर अपने पिताओं के पाइप ओठों में दबाए उदास लड़के और अपनी माताओं की लिपस्टिक और दादियों के पाउडर पोते नन्हीं लड़कियाँ भटक रही थीं।

भूखी बिल्लियों ने आखिरकार चूहे पकड़ना शुरू कर दिया था।

बड़े, दूर चले गए थे, न जाने कहाँ और कोई पता नहीं छोड़ गए थे। उन्होंने अपना तम्बू भूगोल के शिक्षक श्रीमान भूगोल के नाम वाले आदमी द्वारा नक्शे देखकर चुनी गई जगह पर गाड़ा था।

अभिभावक लोग पहले नाककानगले के विचार से सहमत नहीं थे। बच्चों को कुछ दिनों के लिए बड़ों की देखभाल से छुट्टी दे अकेले छोड़ जाने का विचार पहले पहल डा. नाककानगले को ही सूझा था पर लम्बी चर्चाओं के बाद लोग उनसे सहमत हो गए हालाँकि उन भयंकर बच्चों से दूर रहना सभी के लिए असह्य था।

बुजुर्गों के केम्प में पहला दिन यादगारियों में गुजरा। केम्प में जलाये गए अलाव

के चारों ओर बैठकर तमाम माताओं, पिताओं, बाबा-दादियों ने अपने ऊधमी बच्चों की शरारतों, बदमाशियों आदि के वे किस्से दुहराए जो सभी को मालूम थे। बच्चों की स्वार्थी प्रकृति, अड़ियलपन, झूठों और मनमानियों के एक से एक बढ़कर उदाहरण दिए गए और यादों में डूबते हुए कई अभिभावकों को यह भान हुआ कि अपने दिनों में कभी वे भी ऐसे भयंकर बच्चे रह चुके हैं।

रात में कई तम्बुओं से दबी-घुटी सिसकियों और फुसफुसाहटों की आवाजें सुनाई दीं।

"वे डूब सकते हैं।" किसी की माँ बुदबुदाई।

"वहाँ कोई तालाब नहीं है।" किसी के पिता ने उसे समझाया।

"वे नहाने की टंकी में भी डूब सकते हैं।" किसी की दादी माँ ने जोर देकर बात कही।

"उन्हें नहाने-धोने का कोई ऐसा चाव नहीं है।" किसी के बाबा ने उन्हें ढाढ़स बँधाया।

उधर पूँछ से लटके बच्चे को संभाले पतंग उड़ रही थी, उड़ती जा रही थी।

"क्या तुम सही रास्ते चल रही हो?" बच्चे ने पूछा, उस वक्त वे एक बादल से निकलकर दूसरे में धँस रहे थे। "लटके-लटके मैं बुरी तरह थक गया हूँ!"

"पकड़े रहो। अपन जल्द ही वहाँ पहुँचेंगे।"

"तुम्हें वह जगह कैसे मालूम हुई?"

"बच्चे मुझे उड़ा रहे थे। तभी मैंने उनकी बातें सुनीं। अब चुप करो, मेरा ध्यान मत बँटाओ, हमें गाज भरे इस बादल से कटकर निकलना होगा वरना अपन बिजली से टकरा सकते हैं।"

हवा के एक तेज झोंके में फँसकर पतंग यकायक ऊपर को सन्नाई, दाईं ओर को जरा-सा पटकी खाई और पानी भरे एक साधारण बादल का किनारा थामे हुए उसने गड़गड़ाहट और बिजलियों भरे काले बादल से कटकर निकलना शुरू किया।

बच्चे ने जोर से अपनी आँखें मूँदी और खूब कसकर पतंग की पूँछ पकड़ ली।

फन्तिक थकान से चूर होकर लस्त-पस्त होकर घर लौटा। बहुत देर तक उसे नींद नहीं आई। उसकी आँखों के आगे बीते हुए दिन के दृश्य घूमते रहे। सुबह से लेकर देर रात तक वह किसी न किसी की मदद में लगा रहा। हर कोई उसे अपनी ओर खींच रहा था। किसी की सूजी आँख पर उसने पुल्टिस बाँधी और घाव पर सिक्का, किसी दूसरे के पेट पर गर्म पानी की रबर-थैली रखते हुए उसे किस्सा सुनाया ताकि वह अपनी माँ को न पुकारने लगे। कुछ औरों को उसने कपड़े उतारकर पौंछा क्योंकि वे कपड़े पहने ही बिस्तरों पर लोट गए थे और सोने से पहले अपने गन्दे पैर तक नहीं धोना चाहते थे। दूसरों को...दिन भर उसने जो काम लिए उन्हें गिनाना मुश्किल होगा। इतने सब के बावजूद, हर तरह की कोशिश करने पर भी वह किसी बच्चे के माँ या पिता, बाबा या दादी की जगह नहीं ले सका।

करवटें बदलते हुए फन्तिक सोच रहा था कि ऐसा कब तक चलेगा।

बेचैनी-भरी रात शहर पर उतरी।

नन्हें मुन्ने-मुनियाँ सोते-सोते चीख रहे थे : "मुझे माँ चाहिए।" जो जरा बड़े थे। उन्हें बुरे सपने दिख रहे थे—कोई उन्हें आइसक्रीम दिखा रहा था तो आतंक के मारे उनकी नींद खुल रही थी, आँखें फाड़े लेटे-लेटे वे सोच रहे थे : कितना अच्छा हो अगर उन्हें नींद आ जाए और सुबह हाथों की हल्की छुअन और परिचित आवाज में 'उठने का वक्त हुआ' सुनते हुए आँखें खोलें। जब उनकी नींद लगी तब तकिए पछतावे के भीगे निशानों से तर थे।

गोलू घंटाघर की घड़ी की टनटन सुनकर जागा।

नीलू को कोई तकलीफ नहीं थी, वह फिर चंगी हो गई थी।

"चलो स्कूल चलें।" गोलू ने अचानक कहा।

स्कूल के मैदान में नाककानगलों में से कई आम के पेड़ के नीचे पड़ी अपनी चीजें

समेट रहे थे।

गोलू ने टूटे हेन्डिल से और नीलू ने लाल फीते से अपने-अपने बस्ते चट पहचान लिए।

खाली कक्षा में किसी और की डेस्क पर बैठा गुबरेला, हथेलियों में अपना सिर थामे उदासी से ब्लैक़ बोर्ड की ओर ताक रहा था। उस पर अब भी लिखा हुआ था, 'पढ़ाई बन्द।'

गोलू और नीलू अपनी-अपनी डेस्कों पर बैठ गए।

"तुम अपनी क्लास में क्यों नहीं बैठे?" गोलू ने पूछा।

"क्या फर्क पड़ता है।" गुबरेला भर्राई आवाज में बोला। उसे अब भी हल्का जुकाम था।

"ये हमारी क्लास है।" नीलू धीरे से बोली, "अपनी क्लास में जाओ..."

गुबरेला बहस में नहीं उलझा। वह चुपचाप उठा और दरवाजे की ओर बढ़ गया। जब दरवाजा बन्द हो गया तो गोलू ने नीलू के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "टीचर लोग ही रुक गए होते कम से कम..."

ऊपर आकाश में पतंग ने बहादुर खोजी चौराहे के चक्कर लगाए, उसकी पूँछ से कुछ लटका हुआ था। उसकी हरकतें देखकर ऐसा लग रहा था मानों उतरने के लिए उसने शहर का चौक चुना है।

उसे सबसे पहले देखने वाले नाककानगले थे। फिर गुबरेले भी वहाँ आ गए। जल्द ही पूरा चौक बच्चों से भर गया। अपने सिर पीछे को झुकाये, मुँह फाड़े सबके सब नीचे आती पतंग की ओर देख रहे थे।

दूसरी खाली जगह नजर न आने की वजह से पतंग को बहादुर खोजी के सिर पर ही उतरना पड़ा। फिर उसकी पूँछ सरकक़र नीचे आई और पूँछ से बँधे लड़के ने खुद को बच्चों के झुंड में खड़ा पाया।

"तुम कौन हो?" तमंचे ने पूछा।

''मैं भयंकर लड़का हूँ।'' लड़के ने जवाब दिया। तालियाँ गड़गड़ा उठीं।

''तुम यहाँ क्यों आए हो?''

''क्यों? मैं अपनी माँ का कहना मानते-मानते थक गया हूँ और उन्हें छोड़कर उड़ आया हूँ।''

''हमारा हाल बिल्कुल उल्टा है,'' ''तमंचा बोला, ''हमने उनका कहना नहीं माना और वे हमें छोड़कर चले गए हैं।''

''और अब जो चाहो सो कर सकते हो!''

''हाँ, चाहे जो कर सकते हैं, लेकिन पता नहीं क्यों अब हमें कुछ करने का मन नहीं कर रहा।''

''लेकिन मैं चाहता हूँ...'' लड़का बोला, ''मुझे चाकलेट आइसक्रीम की कितनी चाह हो रही है।''

तमंचा घबरा गया और उसका जी मिचलाने लगा।

''मैं फिर उलझ गई।'' पतंग की आवाज सुनाई दी, ''मुझे छुड़ाओ लेकिन जरा ध्यान रख के, मेरा कोई हिस्सा नोंच न देना।''

गुबरेला और दो नाककानगले मूर्ति के ऊपर चढ़ गए और उनने पतंग को बहादुर खोजी के सिर से मुक्त कर दिया। हवा के एक झोके में फँसकर पतंग ने लड़के के हाथ से अपनी पूँछ भी छुड़ा ली।

''किसी छप्पर पर मैं जरा आराम करूँगी।'' पतंग ने आवाज दी और आहिस्ता-आहिस्ता बच्चों के सिर पर से तैरती हुई उड़ गई।

गोलू उस लड़के को फन्तिक के पास ले गया। ''इस लड़के की माँ ने इसे सजा दी तो वह उन्हें छोड़कर उड़ आया।

''क्या! कैसे उड़ आया?''

''क्यों? पतंग से?''

''लेकिन पतंग कहाँ है?''

"एक छप्पर पे आराम कर रही है। ये अभी तुरंत वापिस जा रहे हैं।"

"क्यों? ये यहाँ रुकना नहीं चाहते?"

"मुझे यहाँ अच्छा नहीं लग रहा। मैं सोचता हूँ वापिस घर चला जाऊँ, माँ के पास।" लड़का सुबकते हुए बोला।

फन्तिक ने पल-भर कुछ सोचा। शुरू में ताड़ नहीं पाया कि गोलू उसे लगातार इशारे कर रहा है, कभी एक आँख दबाता, कभी दूसरी। लेकिन जब उसने इशारा देखा तो उसे समझ में आया कि गोलू लड़के को उसके पास क्यों लाया है।

"खैर ठीक है।" फन्तिक बोला, "अगर उसे यहाँ अच्छा नहीं लग रहा तो हम उसे नहीं रोकेंगे। उसे अपने बारे में निर्णय लेने का हक है, लेकिन शायद वह हमें अपनी पतंग एक दो घंटे के लिए उधार दे दे। हम उसे सही सलामत वापिस कर देंगे। क्यों नन्हें बेटे, क्या कहना है तुम्हारा?"

"वह मेरी नहीं है।" लड़का बुदबुदाया, "वह खुद अपनी है।"

"यह तो और भी बढ़िया है।" फन्तिक जोर से बोला और उसने गोलू को इशारा किया, "तब हम उसी से विनम्रता से पूछें, क्या वह हमारी मदद करेगी?"

थकी होने के बावजूद पतंग ने फन्तिक की बिनती मान ली। उस जगह को खोजना जहाँ अभिभावक छिपे थे और उन्हें सभी बच्चों के दस्तखतों वाली चिट्ठी देना। फन्तिक ने खुद वह चिट्ठी जोड़ी-तोड़ी। अब दस्कत कराना भर रह गया था।

सबसे पहले दस्कत किए तमंचे ने, फिर सभी नाककानगलों ने। गुबरेलों ने तो पढ़ने तक की, तकलीफ नहीं की। बस यह पूछा कि और कौन-कौन दस्कत कर चुका है, फिर उसने कुछ गोद दिया। छोटे गुबरेलों ने उसे देखा और कुछ सोचे-विचारे बिना अपने तीस दस्कत जड़ दिए फिर बाकी सबने दस्कत मारे। जो अभी पढ़ या लिख नहीं सकते थे उनने कट्टस का निशान बना दिया।

चिट्ठी जब तैयार हो गई तो उसे सुरक्षा की दृष्टि से ऐसे लिफाफे में भरा गया जो पानी से गीला न हो, फिर उसे पतंग की पूँछ में कसकर कम करें बाँध दिया गया।

"गुड लक! अच्छी खबर लेकर आना!" पतंग को अपने सिर के ऊपर से उड़ते देख फन्तिक चिल्लाया।

"डरो मत, मैं उन्हें ढूँढ लूँगी। दूरियों का मेरा हिसाब अगर सही है तो वे ज्यादा दूर नहीं पहुँचे होंगे।" पतंग की आवाज काफी ऊँचाई से आई।

उसने शहर का चक्कर लगाया और गायब हो गई।

घर लौटने पर फन्तिक को वह नन्हा लड़का अपने बिस्तर पर गहरी नींद में डूबा मिला।

बाकी सभी खतरनाक, भयंकर बच्चे गहरी उत्सुकता में डूबे अपने घरों को चले गए।

चिट्ठी एक गीत की पंक्तियों से खत्म होती थी :

*खूब जोर से याद आ रही मम्मी पपा तुम्हारी*
*पक्का है तुम पर भी याद हमारी होगी तारी*

भलेमानुस डा. नाककानगला जब उन पंक्तियों पर पहुँचे तो लड़खड़ा से गए। उनने अपने चश्मे के काँच पोंछे लेकिन इससे कोई फायदा नहीं हुआ, वे आगे नहीं पढ़ सके। उनका तालू सूख गया और धक-धक करने लगा। फिर उनने खुद को संभाला, उनकी धड़कनें ठीक हुईं, इससे बावजूद श्रीमान भूगोल ने ही चिट्ठी का आखिरी हिस्सा पढ़ा। बड़े ही भाव भरे स्वरों में उनने दोनों अंतिम लाइनें बाँचीं—

*खूब जोर से याद आ रही मम्मी पपा तुम्हारी*
*पक्का है तुम पर भी याद हमारी होगी तारी*

"क्या कहा था मैंने?" डाक्टर खुशी से चिल्लाए, "मैं जानता था! वे सब कुछ समझ गए हैं और हम अब एक नई जिन्दगी शुरू करेंगे। हर बात अलग होगी, तुम लोग देख लेना! और कैसी बढ़िया तुकबन्दी है, कितनी आसानी से याद होने वाली।"

फिर तो खुशी की बाढ़ आ गई। सारे पिता और माताएँ, तमाम बाबा और दादियाँ आपस में हाथ मिलाकर गोल-गोल नाचने लगे। वे गा रहे थे—

*खूब जोर से याद आ रही मम्मी पपा तुम्हारी*
*पक्का है तुम पर भी याद हमारी होगी तारी*

वे इतने खुश थे कि सभी बच्चों जैसा महसूस करने लगे। घास पर कुलाटियाँ खाते हुए वे धमाचौकड़ी मचाने लगे। श्रीमान भूगोल तो ऐसे हुलहुला उठे कि उन्हें अपना मास्टर होना ही भूल गया। अपनी टाँग बढ़ाकर उनने डाक्टर को ऐसी बढ़िया लत्ती मारी कि वे बिलट गए और गोलू और नीलू की दादी को धकियाकर गिरा दिया, गिरते पड़ते दादी ने बाबा की टाँग पकड़ी तो वे एक-दूसरे पर लद्द-पद्द होते नीचे ढलान से लुढ़कने लगे।

पतंग ने यह नजारा देखा। उसने चिट्ठी के जवाब का इंतजार नहीं किया, हर बात साफ हो चुकी थी। चुपचाप किसी की नज़र में पड़े बिना पतंग तम्बुओं के ऊपर उठी और उड़ गई। फन्तिक का काम हो चुका था।

बच्चे फिर शहर के उस चौक पर इकट्ठे हुए।

तमंचा और गुबरेला बहादुर खोजी के कान पकड़े उसके चौड़े कंधों पर बैठे हुए थे, यहाँ तक कि फन्तिक को भी उसके सिर पर थोड़ी-सी जगह मिल गई थी। वह आँखों में दूरबीन लगाए था।

सभी साफ आसमान की ओर बेसब्री से ताक रहे थे।

"वो रही!" तमंचा चिल्लाया।

"वो कबूतर है", अपनी दूरबीन उठाता हुआ फन्तिक बोला।

फिर उड़ता हुआ एक कौआ गुजरा जिसे किसी ने कुछ और समझा। इसके बाद एक और कबूतर उड़ता निकल गया।

आखिरकार लम्बे इन्तजार के बाद वह डाकिया दिखाई दिया। वह अचानक आ पहुँची, उस ओर से नहीं जिधर सब देख रहे थे। हवा के बहाव में वह दूसरी ओर उड़ गई थी, इसलिए घंटाघर के पीछे से आई। उसकी पूँछ घंटाघर की घड़ी के बड़े काँटों में लगभग उलझ ही गई थी।

"वे वापस आ रहे हैं। उनका स्वागत करने के लिए तैयार हो जाओ।" उतरते-उतरते उसने आवाज दी।

"हा हा हा हा! हा हा हा हा!...हुर्रे हुर्रे हुर्रे हुर्रे।"

आवाज मूर्ति के चबूतरे से उठी, उभरी और पूरे चौक में फैल गई।

"इधर आओ, और मुझे अपना चुम्मा लेने दो।" फन्तिक ने तालियाँ बजाते हुए पतंग से कहा। दूरबीन नीचे गिरी लेकिन सौभाग्य से टूटने से बच गई।

"पतंग! पतंग!" नन्हा लड़का चिल्लाया।

चौक खाली हो चुका था, जैसे हवा का कोई झोका तमाम सबको उड़ा ले गया हो।

पतंग ने अपनी पूँछ हिलाई।

"पूँछ का सिरा पकड़ लो।"

हाथों-पाँवों की मदद से नन्हा लड़का पूँछ पर सवार हुआ।

"अच्छे बच्चे, फिर उसी तरह मजबूती से पकड़, जैसे पहले पकड़ा था। अपन चलें।"

वे आकाश में काफी ऊपर पहुँच चुके थे, तभी लड़के ने पूछा, "सुन पतंग! तुझे भी वहाँ अच्छा नहीं लगा न क्यों? है न!"

"सच कहूँ! ऐसी स्वतंत्रता मुझे जरा भी पसन्द नहीं", पतंग ने जवाब दिया, "आखिरकार कुछ व्यवस्था तो होनी ही चाहिए।"

अपनी साइकिल पर सवार फन्तिक, इन्तजाम करता, हुक्म चलाता, सलाह देता और निरीक्षण करता शहर के इस छोर से उस छोर दौड़ रहा था। बच्चे, अपने अभिभावकों के स्वागत की जोरदार तैयारियाँ कर रहे थे। वे कब आएँगे, यह कोई नहीं जानता था इसलिए बच्चों को सड़कों की सफाई करने, पिंजरे के पंछियों को दाना डालने, गमलों में पानी देने, बिस्तर बिछाने, बर्तन साफ करने और जुटकर खुद अपनी सफाई करने जैसे हजारों कामों को जल्दी में निबटाना पड़ा।

'दूध-दाँत, दूकान का फर्श आइने की तरह चमक रहा था। हाल ही हुए आइसक्रीम

युद्ध का कोई निशान कुर्सियों, टेबिलों और दीवारों पर नजर नहीं आ रहा था।

स्कूल के क्लासरूम साफ-सुथरे और खुशनुमा थे—वैसे-जैसे पढ़ाई का साल शुरू होने के पहले दिन होते हैं। सभी ब्लैक बोर्डों पर 'स्वागत' शब्द सुन्दर अक्षरों में लिखा हुआ था।

तमंचा और उसके दोस्तों ने तिलंगों की गली का जिम्मा लिया। पानी के बड़े-बड़े बर्तन ले उनने, उन तमाम दीवारों, दूकानों की खिड़कियों और चारदीवारियों से वे सभी चित्र साफ किए जो 'मनमानी के मजे' के पहले दिन उनने रुचि ले लेकर बनाए थे।

"लड़ाई मुर्दाबाद!" तमंचा चिल्लाया और उसने लड़ाई करने जा रहे एक टैंक पर पानी की जोरदार धार मारी। इस तरह टैंक चारदीवारियों से ही धारियों में बह-बहकर सड़क पर पहुँच गए। तोपें तो ऐसी गायब हुईं कि उनका नामोनिशान तक मिट गया। राकेटों ने अपनी उड़ानें रोकीं और धुलकर साफ हो गए।

इतना तो मानना ही होगा कि नाककानगले अपनी कल्पना के करतब मिटाने के ख्याल से दुखी हो रहे थे, लेकिन फन्तिक ने दो-टूक बात कह दी, "अगर अपने शहर को ठीक-ठाक करना चाहते हो तो काम तिलंगों की गली से शुरू करना होगा, वरना कोई तुम्हारी बात पर भरोसा नहीं करेगा..."

वे भरोसा क्यों नहीं करेंगे, तमंचे ने सोचा—जिसने गली पेन्ट करने में सबसे ज्यादा मेहनत की थी। वे क्यों नहीं मानेंगे। वहाँ सचमुच का युद्ध बनाया गया था—युद्ध। फिर भी उसने फन्तिक से बहस नहीं करनी चाही। बच्चों ने उसकी हर बात मानने का निश्चय कर लिया। वह कमांडर था।

दोपहर के ठीक चार बजे अभिभावकों की पहली पाँत बहादुर खोजी चौक में घुसी।

बच्चे और नाती-पोते उनके सामने खड़े थे, ऐसे सलीके से जैसे परेड में खड़े हों। साफ-सुथरे, इस्तरी किए सूट और पालिश किए चमाचम बूट पहने। बालों में चिकनी पटियाँ पारे, साफ रिबन बाँधे नन्हीं बिट्टियाँ। सभी शांत और आज्ञाकारी। हर काम करने को तैयार—जो भी उन्हें कहा जाए। आदर्श बच्चे!

सारे पिता, माताएँ, बाबा-दादियाँ झटका खा गए। वे कुछ दूसरी ही उम्मीद लगाए

थे— लिपटना...आँसुओं की झड़ी...खुशी और प्रसन्नता की कीकें।

"कैसे भयंकर बच्चे!" डाक्टर फुसफुसाए, इन तीन दिनों में ही वे क्या सचमुच इतने बदल गए हैं! इन्हें क्या हो गया है! ये तो नन्हें बूढ़े-बूढ़ियों की तरह लग रहे हैं।"

अचानक ही एक नन्हें बूढ़े ने फूलों का एक गुच्छा हिलाया और उसका इशारा पाते ही आदर्श बच्चों की कतारें टूट गईं और वे बन्दरों के बच्चों के समान किकियाते बिखर गए। जैसे किसी समझौते के तहत बच्चे बुजुर्गों की ओर लपके।

"अरे! मुझे छोड़ो, मैं तुम्हारा नहीं, तुम्हारा नहीं मैं!" दूसरों के नाती-नतिनियों को टरकाते किसी के बाबा चिल्लाए।

"ये तुम्हारी माँ नहीं, हमारी है।" जुड़वों को अपनी अकबकाई माँ से दूर करता तमंचा गुर्राया।

"अरे! वो मैं नहीं हूँ! वो मैं नहीं! मैं यहाँ हूँ, यहाँ!" मूर्ति के चबूतरे पर खड़े होकर अपने फेफड़ों की पूरी ताकत से डाक्टर चिल्लाए, अपना टोप हिलाते हुए ताकि वे अपने उन सभी नाककानगलों का ध्यान अपनी ओर खींच सकें जो दूसरों के पिताओं का पीछा कर रहे थे।

टूटे बटनों, मुड़े-तुड़े कपड़ों और इस धक्का-मुक्की में खोए और टूटे चश्मों के साथ सारे पिता और माताएँ, बाबा और दादियाँ अपने-अपने बच्चों के कब्जे में पहुँचकर घरों को रवाना हुए।

केवल फन्तिक, अकेला घर लौटा।

वह अपने लोहे के पलँग पर लोटा और तुरन्त सो गया—शुद्ध आत्मा वाले आदमी की शांत नींद। उसने सपने में देखा कि वह नीलू के लिए कमल के फूलों का एक गुच्छा ले जा रहा है।

सुबह आई।

मनमानी के मजे के तीन दिन के मेले के बाद शहर अपने ढर्रे पर लौट आया था। यातायात बत्तियाँ चौराहों पर जल-बुझ रही थीं। पैदल चलने वाले सड़क के बाजू से चल

रहे थे। गाड़ियाँ सड़कों पर आ-जा रही थीं। ब्रेड वालों के यहाँ ताजी खुशबूदार डबल रोटियाँ, दूध वाले के यहाँ ताजा दूध और दही, सब्जी वाले के यहाँ ताजी सब्जियाँ और फल, कसाई के यहाँ ताजा गोश्त और 'दूध दाँत' में किसिम-किसिम की आइसक्रीमें नजर आ रही थीं।

नाई और बालसाज सफेद कोट पहने अपनी कुर्सियों के बाजू में तैयार खड़े थे। डाक्टरों ने अपने बैगों में सिरिन्जें, स्टेथेस्कोप वगैरह डाले। दवाफरोशों ने जहरवाली वे आल्मारियाँ खोलीं जो खूब मजबूती से बन्द की गई थीं। मास्टरों ने अपनी लाल पेंसिलों की नोंकें और रसोइय़ों ने अपने चाकुओं की धारें पैनी कीं।

"शुभ दिन! सुबह के व्यायाम के लिए तैयार हो जाइए", रेडियो से आवाज आई।

एक नया दिन शुरू हो चुका था।

कक्षा पहली 'अ' के पहले घंटे में पहली पाँत में बैठे किसी बच्चे को 'खराब' मिला।

दोपहर के एक बजे पहली फुटबाल ने तिलंगों की गली की एक खिड़की का काँच तोड़ा।

"सुन! नीलू! सुन! मुझे तुमसे कुछ कहना है, ध्यान से सुन।" गोलू ने रहस्य भरे अंदाज में कहा—"मुझे बाबा की टेबिल की दराज में एक पीली ट्यूब मिली है। अगर हम टोटो को फिर से रँगें तो कैसा रहे!"

हर चीज हर जगह फिर शुरुआत से शुरू हुई। कमरे में चाबी घूमी और माँ अन्दर आई। नन्हा लड़का अभी भी कोने में खड़ा था।

"मैं तुम्हें माफ करती हूँ।" माँ ने लाड़ से कहा।

"तुम मुझे चाकलेट आइसक्रीम ले दोगी ना?" लड़के ने कनखी से खुली खिड़की की ओर देखते हुए पूछा।

"अगर तुम अच्छे बनने का वादा करो।" माँ बोली।

एक बड़ी सुन्दर पतंग घर के ऊपर स्वतंत्रता से तैर रही थी। जब-तब हवा के झोंके उसे किसी ओर खींच ले जाते और ऐसा लगता कि अब वह अपना संतुलन खोकर

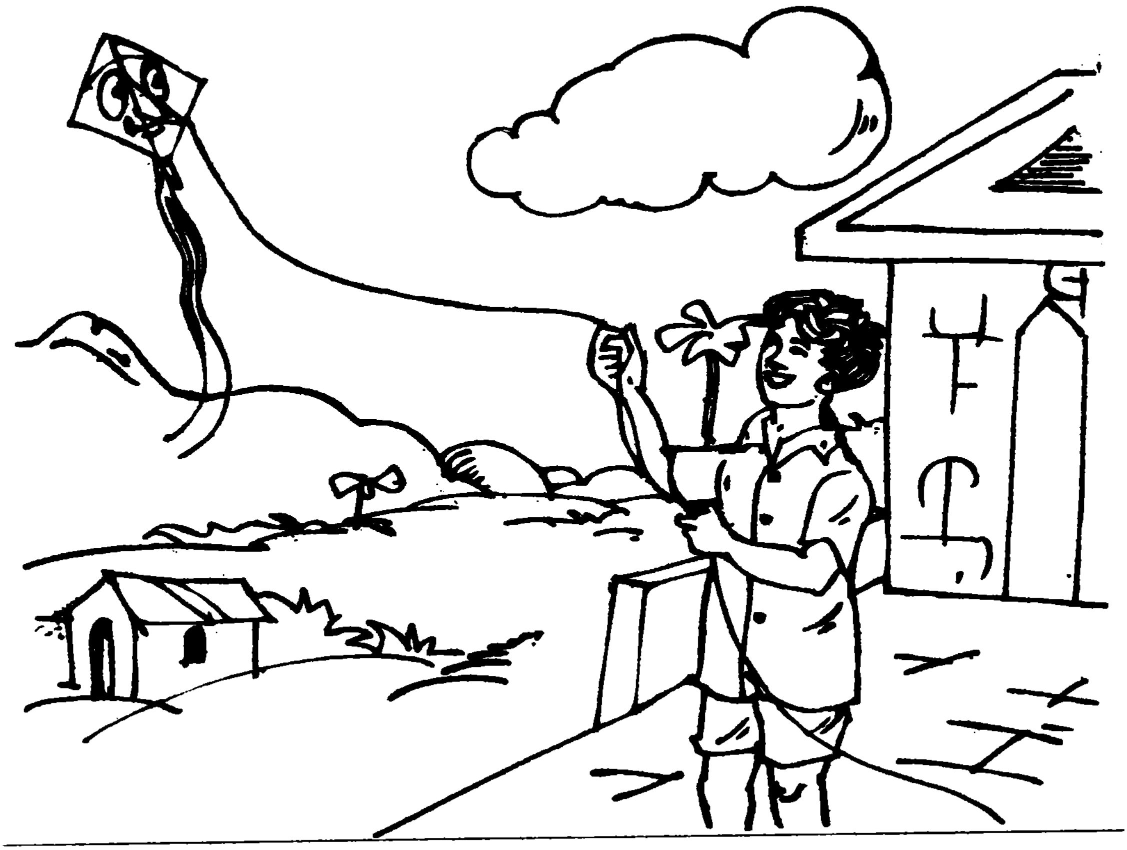

असहाय हो नीचे आ जाएगी। लेकिन आँगन में खड़ा हुआ एक बच्चा उसे ध्यान से देख रहा था। धागे को कभी लम्बी ढील देता, कभी उसे घिर्री में लपेटता। हवा का कोई झोका उस पतंग को नुकसान नहीं पहुँचा पा रहा था, क्योंकि वह बच्चा पतंग को काबू में रखना जानता था।

□ □